भारत में क्या निर्माण करें? विनिर्मित उत्पाद या सेवाएं?[1]

07
अध्याय

''औद्योगिक क्रांति के बाद से कोई भी देश औद्योगिक शक्ति बने बिना प्रमुख अर्थव्यवस्था नहीं बन पाया है।''

ली कुआन यूई, वर्ष 2005 में नई दिल्ली में जवाहरलाल स्मारक व्याख्यान देते हुए

7.1 परिचय

सिंगापुर के इस विद्वान की बात को दोहराते हुए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने भारतीय विनिर्माण क्षेत्र के पुनरुद्धार को नई सरकार का प्रमुख नीतिगत उद्देश्य बना दिया है, जिसमें इस क्षेत्र को दीर्घावधिक विकास के अग्रदत का दर्जा दिया गया है। मेक इन इंडिया अब न सिर्फ एक दिलचस्प नारा है बल्कि अब एक फ्लैगशिप योजना है। लेकिन सवाल यह उठता है ''भारत में बनाया क्या जाए?''

विकास के सम्बन्ध में आरंभिक विचारधारा लुईस (1954) के दो क्षेत्रीय मॉडल में उद्भूत हुई, हालांकि यह पूर्णतया विशिष्ट नहीं थी। इसमें क्षेत्रगत परिवर्तन के विचार पर बल दिया गया: कृषि/परंपरागत क्षेत्र से संसाधनों को हटाकर विनिर्माण/गैर परंपरागत क्षेत्र में लगाना। इस क्रम-अनुक्रम के बारे में किसी को संदेह नहीं था (उत्तरोक्त निश्चित रूप से पूर्वोक्त से श्रेष्ठ था) और इसलिए इस परिवर्तन की वांछनीयता के बारे में किसी को संदेह नहीं था।

हालांकि पिछले दो दशकों में विकास के बारे में प्रचलित विचारधाराओं में क्षेत्रगत परिवर्तन पर चर्चा अब हटकर अधिक स्पष्ट विकास परिप्रेक्ष्य की ओर मुड़ गई हैं, संरचनागत परिवर्तन का महत्व भी बहाल होना भी शुरू हो गया है-लेकिन इसमें विकास सम्बन्धी दृष्टिकोण को पूर्णत: त्यागा नहीं गया है। इन दो परिप्रेक्ष्यों के संयोग की व्याख्या रोड्रिक (2013 और 2014) में की गई है।

निम्नलिखित समीकरण पर विचार करें।

$$\hat{y} = \beta(\ln y^*(\theta) - \ln y) + (\pi_M - \pi_T)d\alpha_M + \alpha_M \pi_M \beta_M(\ln y_M^* - \ln y_M)$$

इस समीकरण के तीन भाग हैं। पहला, प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद का विकास ($\hat{y}$ द्वारा प्रदर्शित) परंपरागत सशर्त समाभिरूपता परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है जिसमें अनेक मूलभूत तत्वों (नीतियां, मानव पूंजी, खुलापन, संस्थाएं आदि) पर निर्भर करते हुए फ्रंटियर ($y^*(\theta)$) तक पहुंचा जा सकेगा। लेकिन ये धीमी प्रक्रिया है क्योंकि परिभाषा के मुताबिक मूलभूत तत्वों में परिवर्तन बहुत धीमा होता है। इसके अलावा, यह सशर्त समाभिरूपता फ्रेमवर्क अपर्याप्त है क्योंकि इसमें विकास के चमत्कार अथवा उसमें तेजी की व्याख्या नहीं की जा सकती- चीन ऐसे अनेक मूलभूत तत्वों का विशिष्ट अपवाद है।

इसलिए इस फ्रेमवर्क के पूरक के तौर पर स्पष्ट संरचनागत परिवर्तक घटकों की जरूरत होती है। इन बातों को समीकरण के दूसरे और तीसरे भाग में शामिल किया गया है। दूसरे भाग में कम उत्पादकता अर्थात् परंपरागत (T) क्षेत्रों से उच्च उत्पादकता वाले आधुनिक क्षेत्रों (M) तक संरचनागत परिवर्तन की बात कही गयी है, जहां (π_i) का अर्थ है क्षेत्र (i) में उत्पादकता और (α_M) का अर्थ है आधुनिक क्षेत्र में रोजगार का हिस्सा। यह विशिष्ट द्वैत मॉडल है जिसका अर्थ है कि आर्थिक विकास, परिभाषा के मुताबिक संसाधनों को निम्न से हटाकर उच्च उत्पादकता क्षेत्रों में लगाने की

[1] जब यह अध्याय लिखागया था, तब से सीएसओ ने भारत में विनिर्माण और अन्य क्षेत्रों के नए अनुमान के आकार प्रकाशित कर दिए हैं। वे स.घ.उ. में विनिर्माण के हिस्सेदारी के स्तर में वृद्धि इंगित करते हैं, हालांकि जिन तीन वर्षों के लिए नए अनुमान दिए गए हैं, इस हिस्से में अभी भी गिरावट है। यहां तक कि बढ़ा हुआ स्तर ''आधारिक'' कारणों से न होकर ''सांख्यिकीय अधिक है। इस लिए हम इस अध्याय के निष्कर्षों को मुख्यत: वैध होने की उम्मीद करते हैं लेकिन जब तक नए आंकड़ों से विश्लेषण नहीं किया जाता, ये निष्कर्ष निश्चित नहीं हो सकते।

प्रक्रिया है जिसके द्वारा समस्त अर्थव्यवस्था में उत्पादकता के स्तरों में बढ़ोतरी होती है।

समीकरण का तीसरा भाग नया है और इसमें उच्च उत्पादकता क्षेत्र में बिना शर्त समाभिरूपता की प्रक्रिया शामिल है। मूलत: एक बार संसाधनों के इस क्षेत्र में आ जाने के बाद वे बढ़ती उत्पादकता का बिना शर्त अथवा ऑटोमेटिक वृद्धि का अनुभव करते हैं। आधुनिक क्षेत्र की समाभिरूपता विकास दर द्वारा प्रदर्शित)। इससे सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में उत्पादकता के स्तरों में और वृद्धि होती है।

दूसरे शब्दों में, संसाधनों को परंपरागत क्षेत्र से हटाकर नए क्षेत्रों में लगाने के दो भाग हैं: पहला, संघटनात्मक लाभ, जो अर्थव्यवस्था के भार को कम उत्पादकता से उच्च उत्पादकता क्षेत्रों में हटाकर, संपूर्ण अर्थव्यवस्था की उत्पादकता का बढ़ाने में प्राप्त होता है; दूसरा, अनुवर्ती गतिशील लाभ क्योंकि इन संसाधनों में तीव्र उत्पादकता विकास संभव हो पाता है। रोड्रिक (2013) का योगदान यह दिखाने में रहा है कि विनिर्माण क्षेत्र वाकई इस तीव्र विकास को प्रदर्शित करता है अथवा फ्रंटियर तक बिना शर्त समाभिरूपता संभव करता है; अर्थात अपेक्षाकृत गरीब देशों में विनिर्माण और कम उत्पादनकारी विनिर्माण गतिविधियां औसतन समय के साथ-साथ अधिक तीव्र विकास अनुभव करती हैं।

जैसे ही हम इस फ्रेमवर्क को अपनाते हैं, यह सवाल उठ खड़ा होता है: *क्या ये संघटनात्मक और गतिशील लाभ विनिर्माण क्षेत्र तक ही सीमित हैं?* दूसरे शब्दों में, हालांकि संरचनागत परिवर्तन के बारे में विचारधाराओं का पहला चरण क्षेत्रों के क्रम की निश्चितता से तय हुआ था, आज उस निश्चितता को लेकर कुछ कम आधार है क्योंकि अब यह तुलना कृषि और विनिर्माण क्षेत्र की नहीं है बल्कि विनिर्माण और सेवा क्षेत्र की है (अथवा कम से कम कुछ सेवा उप क्षेत्रों में)।

यह अध्याय नए संरचनागत परिवर्तन और विशेषकर विनिर्माण और सेवा क्षेत्र की तुलना के सवाल पर कुछ रोशनी डालने का विनम्र प्रयास है।

7.2 क्षेत्रगत वांछनीय विशेषताएं जो संरचनागत परिवर्तन के प्रेरक के रूप में काम कर सकती हैं

इस सवाल का समाधान करने के लिए भारत का एक विषय के तौर पर अध्ययन किया जाता है क्योंकि भारत में विनिर्माण क्षेत्र का अपेक्षाकृत खराब निष्पादन रहा है और सेवाओं का अपेक्षाकृत मजबूत निष्पादन रहा है-जो कुछ अर्थों में उप-सहारा अफ्रीकी देशों के कार्य निष्पादन को प्रतिबिंबित करता है (ग़नी और ओ कॉनेल, 2014)

ली कुआन यूई निश्चित रूप से किसी सच्चाई पर पहुंच रहे थे जब उन्होंने भारतीय विकास मॉडल को चुनौती दी। पारंपरिक रूप से अल्प विकास से बचने के तीन तरीके हैं: भू-विज्ञान, भूगोल, और ''जींस'' (निम्न कौशल के विनिर्माण का कोड)। हालिया वर्षो में पश्चिम एशियाई देशों, बोट्सवाना, और चिली ने आज और बीते समय में आस्ट्रेलिया एवं कनाडा ने अपने जीवन स्तरों को बढ़ाने के लिए भूमि द्वारा प्रदान किये गये प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया। कुछ द्वीपों (बारबाडोस, मॉरीशस और कैरेबियन में अन्य द्वीप) की सफलता के पीछे उनके द्वारा अपने भूगोल का दोहन करके इन द्वीपों में पर्यटन का विकास करके उच्च विकास दरें प्राप्त किया जाना है।

पूर्वी एशियाई देशों ने अपनी सफलता के आरंभिक दौर में आर्थिक विकास को प्रेरित करने के लिए कम कौशल वाले विनिर्माण, विशेषकर वस्त्र उद्योग और परिधान (चीन, थाइलैंड, इंडोनेशिया, मलेशिया आदि) का सहारा लिया। इसके बाद वे अधिक परिष्कृत विनिर्माण की ओर मुड़े लेकिन ''जींस'' ने आरंभिक समृद्धि के साधन का काम किया। कोई भी देश सतत् विकास के लिए आरंभिक चरण में अपेक्षाकृत कौशल प्रधान गतिविधियों को इस्तेमाल करके अल्पविकास से नहीं बच पाया है और यही प्रयास भारत का भी है।

दूसरे शब्दों में कहें तो भारत अपने ''प्राकृतिक'' तुलनात्मक लाभ की विपरीत दिशा में जाता प्रतीत हो रहा है, जो इसके प्रचुर अकुशल और कम कुशलता प्राप्त श्रम बल के कारण ''जींस'' किस्म के बचाव में निहित है। इसकी बजाय, भारत मे पारंपरिक नीतिगत विकल्पों और प्रौद्योगिकीय घटनाओं की मेहरबानी से ऐसे लाभ प्राप्त किए अथवा सृजित किए जो सूचना प्रौद्योगिकी और बिज़नेस प्रोसेस आउटसोर्सिंग जैसी अपेक्षाकृत कुशल गतिविधियों में निहित था (कोछड़ और अन्य, 2007)।

भारतीय अनुभव, जो अभी भी हासिल किए जाने की प्रक्रिया में है, यह प्रश्न उठाता है कि क्या संरचनागत परिवर्तनों के लिए विनिर्माण क्षेत्र का विकास का प्रेरक होना जरूरी है। लेकिन इससे पहले हम संरचनागत परिवर्तन की क्षमता के संदर्भ में वैकल्पिक क्षेत्रों के साथ विनिर्माण की तुलना करना शुरू कर दें, ऐसे क्षेत्रों की वांछनीय विशेषताओं पर चर्चा करना उपयोगी होगा।

दरअसल, रोड्रिक (2013) फ्रेमवर्क के आधार पर यह तर्क दिया जाता है कि ऐसी पांच विशेषताएं होती हैं जो किसी क्षेत्र को संरचनागत परिवर्तन के प्रेरक के रूप में कार्य करने देती हैं और इस तरह अर्थव्यवस्था को तीव्र, सतत् और समावेशी विकास की ओर ले जाती हैं:

1. *उत्पादकता का उच्च स्तर:* जैसा कि ऊपर बताया गया है, आर्थिक विकास का अर्थ है निम्न उत्पादकता से हट कर उच्च उत्पादकता वाली गतिविधियों से जुड़ना।

2. *बिना शर्त समाभिरूपता* (कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों में तीव्रतर उत्पादकता वृद्धि): इस पर पहले भी चर्चा की जा चुकी है। आपको याद होगा कि समाभिरूपता यह सुनिश्चित करती है कि प्रासंगिक क्षेत्र ''एस्केलेटर'' के रूप में कार्य करे जिससे स्वत: ही क्षेत्रगत और इस तरह संपूर्ण अर्थव्यवस्था में उत्पादकता का स्तर ऊंचा हो। वस्तुत: दो प्रकार की बिना शर्त समाभिरूपता के बीच अंतर किया जा सकता है;

क. घरेलू समाभिरूपता: भारत, चीन, ब्राजील और इंडोनेशिया जैसे बड़े देशों में हम आदर्शत: देश के *भीतर* ही समाभिरूपता देखना चाहेंगे। अर्थात् देश के अपेक्षाकृत निर्धन भागों में, उत्पादकता की वृद्धि समृद्ध भागों की तुलना में अधिक तीव्र होनी चाहिए। अन्यथा देश के भीतर ही गंभीर क्षेत्रीय असमानता पैदा हो सकती है।

ख. अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता: जहां सभी देशों में मौजूद कम उत्पादनकारी आर्थिक यूनिटें (भले ही वे फर्में, क्षेत्र अथवा संपूर्ण अर्थव्यवस्थाएं हों) अंतरराष्ट्रीय सीमा (सर्वाधिक उत्पादनकारी देशों में स्थित) से जुड़ी यूनिटों से मुकाबला करें।

3. *विस्तार:* यह सुनिश्चित करने के लिए कि समाभिरूपता से प्राप्त गतिशील उत्पादकता लाभ संपूर्ण अर्थव्यवस्था में व्याप्त हो जाएं, यह जरूरी है कि समाभिरूपता का अनुभव कर रहे क्षेत्र संसाधनों को खपायें। समाभिरूपता के साथ हो रहे संकुचन अर्थव्यवस्था व्यापी लाभ सुनिश्चित नहीं कर पाएंगे क्योंकि संबंधित क्षेत्र की परिधि से बाहर देश के संसाधन अधिक उच्च, समाभिरूप उत्पादक विकास नहीं कर पाएंगे। यदि वाकई समावेशी विकास किया जाना है तो, औद्योगिक क्षेत्र के मामले में समाभिरूपता के साथ स्वाभाविक औद्योगीकरण होना चाहिए न कि समयपूर्व औद्योगीकरण का कम हो जाना।

4. *तुलनात्मक लाभ के अनुरूप होना:* ये सुनिश्चित करने के लिए कि विकास हो और इसे और तेजी से बढ़ते क्षेत्रों के लाभ समस्त श्रमशक्ति के साथ साझा किया जाए, बढ़ते क्षेत्र की कौशल संबंधी जरूरतों और देश के कौशल भंडार के बीच तालमेल होना चाहिए। उदाहरणत: भारत जैसे श्रमशक्ति प्रचुर देश में, समाभिरूप होता क्षेत्र अपेक्षाकृत कम कौशल वाली गतिविधि में होना चाहिए ताकि अधिकाधिक संसाधन समाभिरूपता का लाभ उठा सकें।[2]

5. *विक्रेयता:* परंपरागत तौर पर जिन देशों में विकास के दौर आते रहे हैं, उन्होंने विशेष रूप से विनिर्माण क्षेत्र में निर्यातों में तीव्र वृद्धि देखी है (जॉनसन, ऑस्ट्री और सुब्रह्मण्यम (2010))। इसके विपरीत, तीव्र विकास कदाचित् ही घरेलू बाज़ार पर आधारित रहा हो। इसका एक कारण यह हो सकता है कि व्यापार, प्रौद्योगिकी अंतरण और सीखने सिखाने के एक तंत्र के रूप में काम करता है जिससे संबंधित उद्योगों पर भी प्रभाव पड़ सकता है। (हॉस्मैन, हुआंग और रोड्रिक (2007)। शायद अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि विशेषकर व्यापार और निर्यात विकसित होते क्षेत्र के लिए अनियंत्रित मांग का स्रोत होते हैं। यह विशेषकर भारत जैसे बड़े देश के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह संभावना है कि इसके विस्तार से भारतीय निर्यातों को खपाने और/अथवा व्यापार की शर्तों को बदलने में कारोबारी देशों की सीमित राजनीति और आर्थिक क्षमता के विरुद्ध जाया जा सकता है।

विनिर्माण और सेवा (उप क्षेत्रों द्वारा विभाजित सेवाओं सहित) के इन दो क्षेत्रों को अब भारत में पांच आयामों के संदर्भ में मूल्यांकित किया जाता है।[3]

---

[2] यह चिंता का सबब हो सकता है कि किसी देश की विशिष्टीकरण पद्धति (कुशल अथवा कम कुशल कार्यकलाप में) आगे चलकर देश के कौशल भंडार पर असर डाल सकती है। विशेषकर, ब्लैंचर्ड और ऑलनी (2013) दर्शाते हैं कि कम कौशल के उत्पादों का बढ़ता निर्यात मानव पूंजी की उपलब्धियों के अपेक्षाकृत कम औसत स्तरों की ओर ले जाता है। ऐसा स्टोलपर-सैमुअलसन प्रभाव की वजह से होता है। फिर भी इस अध्याय में हम यह दृष्टिकोण अपना रहे हैं कि उपर्युक्त क्रियाविधि विकास प्रक्रिया में दूसरे स्तर का प्रभाव रखेगी। वस्तुत:, पूर्वी एशिया का अनुभव यह बताता है कि देशों के लिए संभव है कि वे कम कौशल वाले लेकिन गतिशील कार्यकलापों की विशिष्टता हासिल करके शुरूआत करें और बाद में जब विकास प्रक्रिया अपने बूते पर शुरू हो जाए तो अधिक कौशल प्रधान उत्पादन प्रक्रिया की ओर बढ़ें।

[3] कृपया ध्यान दें: इस अध्याय में इस्तेमाल डाटा स्रोतों से संबंधित सूचना के लिए वर्किंग पेपर-अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015) को देखें।

7.3 विनिर्माण क्षेत्र का स्कोर कार्ड

7.3.1 उत्पादकता स्तर

सारणी 7.1 में दो समयावधियों अर्थात 1984 और 2010 में विनिर्माण क्षेत्र सहित विभिन्न भारतीय क्षेत्रों में उत्पादकता के स्तर (प्रति कामगार मूल्यवर्धन के रूप में मापित) की तुलना की गई है। इसकी कई विशेषताएं सामने आई हैं। पहले तो यह कि भारत में विनिर्माण के बारे में कुछ भी कहना भ्रामक हो सकता है क्योंकि *अपंजीकृत* विनिर्माण-जो बहुत कम उत्पादकता स्तर वाली गतिविधि है-और *पंजीकृत* विनिर्माण जो उच्च उत्पादकता (7.2 गुणा अधिक) वाला क्षेत्र है, के बीच स्पष्ट अंतर है। संरचनागत परिवर्तन की दृष्टि से, सामान्य विनिर्माण न हो कर *पंजीकृत* विनिर्माण ही है जिसमें संरचनागत परिवर्तन लाने की क्षमता है।

दूसरे, पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र में उत्पादकता का स्तर न सिर्फ अपंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र के मुकाबले अधिक है बल्कि यह अर्थव्यवस्था के अधिकतर अन्य क्षेत्रों के मुकाबले भी अधिक है और यह पूर्ण अर्थों में बाज़ार मुद्रा दरों पर 7800 अमरीकी डॉलर के स्तर पर भी अधिक है और पीपीपी विनिमय दरों के लगभग तीन गुना है। यदि समस्त भारतीय अर्थव्यवस्था को पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र में लगा दिया जाए तो भारत कोरिया जितना समृद्ध हो जाएगा।

तीसरे, पंजीकृत निर्माण और शेष अर्थव्यवस्था के बीच ये अंतर 1984 में भी मौजूद थे (भले ही इस हद तक नहीं थे)-इस अवधि में अधिक उत्पादकता वृद्धि (प्रतिवर्ष लगभग 5 प्रतिशत) ने इन अंतरों को सिर्फ बढ़ाया ही है।

इस तरह उत्पादकता के उच्च स्तर संबंधी पहले मापदंड पर पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र अच्छे नंबर लेकर उत्तीर्ण हुआ है।

7.3.2 घरेलू समाभिरूपता

चित्र 7.1 में दर्शाया गया है कि पंजीकृत विनिर्माण की विशेषता बिना शर्त घरेलू समाभिरूपता होती है। यहां प्रेक्षण की इकाई राज्य-स्तर का उद्योग है लेकिन लगभग यही परिणाम अधिक समग्र स्तरों पर (भारत के प्रमुख राज्यों में) और कम समग्र स्तरों पर (फैक्टरियों में) देखने पर भी हासिल होते हैं।[5] मोटे तौर पर, लगभग (-) 2.5 प्रतिशत की आरंभिक उत्पादकता के लॉग पर परावर्तन गुणांक यह बताता है कि कोई भी राज्य किसी ऐसे राज्य से दो गुना समृद्ध होता है उसकी उत्पादकता की औसत विकास दर 2.5 प्रतिशत धीमी होती है- इस तथ्य को देखते हुए कि

सारणी 7.1: भारतीय अर्थव्यवस्था में समय-समय पर क्षेत्रवार श्रम उत्पादकता

	स्तर (स्थिर 2005 रू.)		वृद्धि दर (प्रतिशत)	
	1984	2010	1984-2010	2000-2010
सेवाएं	61,978	213,014	4.9	6.3
विनिर्माण	48,817	125,349	3.7	4.2
पंजीकृत विनिर्माण (एमओएसपीआई)	117,984	360,442	4.4	5.4
अपंजीकृत विनिर्माण	28,548	50,312	2.2	1.2
सेवा उपक्षेत्र				
व्यापार, होटल और रेस्तरां	56,284	144,108	3.7	7.3
परिवहन, भंडारण और संचार	68,823	172,058	3.6	4.5
वित्तीय सेवाएं और बीमा	198,584	706,297	5.0	-1.6
स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं आदि	1,012,017	875,073	-0.6	3.2
लोक प्रशासन और रक्षा	41,154	231,109	6.9	7.0
निर्माण	62,773	95,866	1.6	2.1

स्रोत : **अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)**

[5] हमारे परिणाम भी विभिन्न (कमतर) समय अवधियों और उत्पादकता के भिन्न-भिन्न मापकों के प्रति अनुक्रियाशील हैं। ये और कई अन्य परिणाम अमिरापु और सुब्रह्मण्यम (2015) में सूचित किए गए हैं। ये उल्लेखनीय है कि अपंजीकृत विनिर्माण भारत के विभिन्न राज्यों में बिना शर्त समाभिरूपता प्रदर्शित नहीं करते।

चित्र 7.1[4]: पंजीकृत विनिर्माण में घरेलू समाभिरूपता-राज्य-3 अंकीय उद्योग नियत प्रभाव, 1981-2008 वाला उद्योग स्तर

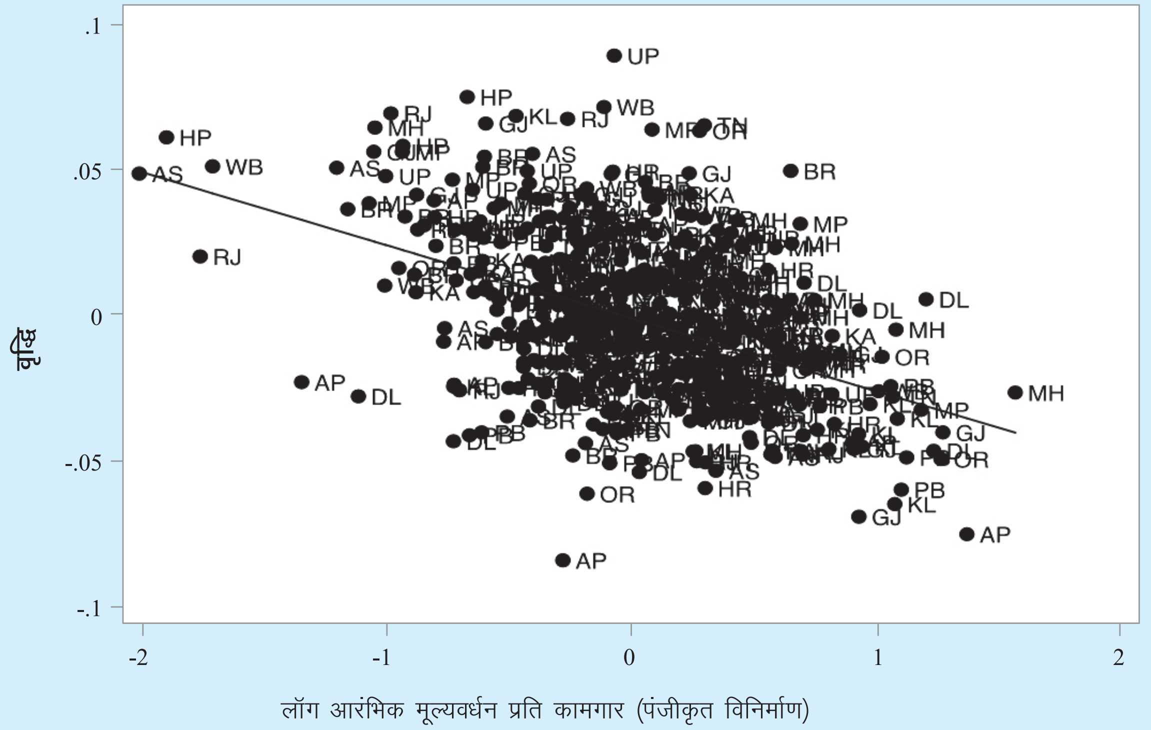

coef = -.02501671, (सुदृढ़) se = .00225602, t = -11.09

***स्रोत :* अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)**

1984-2010 की अवधि के बीच उत्पादकता की औसत दर लगभग 4.4 प्रतिशत थी, यह आंकड़ा काफी अधिक है।

7.3.3 अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता

पंजीकृत विनिर्माण के संबंध में ऐसा प्रतीत होता है कि भारत में राज्य और फर्में भारतीय फ्रंटियर तक मिलकर पहुंच रही हैं लेकिन इसका तब तक कोई महत्व नहीं होगा जब तक वे अंतरराष्ट्रीय विनिर्माण फ्रंटियर तक न पहुंचे। क्या ऐसा हो रहा है?

रोड्रिक (2013) दर्शाते हैं कि विनिर्माण क्षेत्र में देशों और क्षेत्रों का बिना शर्त समाभिरूपता हो रही है, लेकिन भारत दो अर्थों में इस संबंध में नकारात्मक अपवाद है; पहले, भारत में औसत विनिर्माण क्षेत्रों में जो श्रम उत्पादकता वृद्धि दिखाई देती है वह विश्व के औसत विनिर्माण क्षेत्र की वृद्धि से 14 प्रतिशत कम है। दूसरे, भारतीय उद्योग औसत (.005 प्रतिशत) से कहीं कम धीमी दर पर समाभिरूप होते हैं या कहें तो न के बराबर। इसके विपरीत, चीन एक सकारात्मक अपवाद है जो औसत से कहीं अधिक श्रम उत्पादकता वृद्धि दर्ज कर रहा है और वैश्विक फ्रंटियर से अधिक तेजी से मिल रहा है।[6]

[4] यह ध्यान दें कि यह आंकड़ा ''आंशिक अवशिष्ट प्लॉट'' है: यह आरेख में दो परिवर्तनीय कारकों के बीच संबंध प्रदर्शित करता है जबकि उपयुक्त होने पर अन्य परिवर्तनीय कारकों को नियंत्रित करता है (इस मामले में तीन अंकीय उद्योग नियत संपत्ति)।

[6] अधिक औपचारिक दृष्टि से, जब भारतीय डमी और चीनी डमी को अलग से जोड़ा जाता है और समाभिरूपता गुणांक के साथ अंत:क्रिया की जाती है तो भारतीय डमी का गुणांक -.14 है (टी-1.97 की सांख्यिकी) और समाभिरूपता के साथ अंत:क्रिया की गई भारतीय डमी का गुणांक .017 है (टी-2.05 की सांख्यिकी)। चीन के तद्नुरूप गुणांक हैं 0.166 (टी-2.65 की सांख्यिकी) और -.011 (टी-1.4 की सांख्यिकी)। हम ये परिणाम देने के लिए डानी रोड्रिक के आभारी हैं।

भारत में पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र इस तरह बहुत अच्छा प्रदर्शन नहीं करता रहा है।

7.3.4 विस्तार अथवा समय-पूर्व औद्योगीकरण का कम होना

यह एक अस्वाभाविक तथ्य है कि विकास की प्रक्रिया में औद्योगीकरण का दौर और उसके बाद औद्योगीकरण कम होने का दौर होता है: कोई भी देश पहले संसाधनों की बढ़ती हिस्सेदारी को अनुभव करता है- विशेषकर श्रमशक्ति जो औद्योगिक क्षेत्र को समर्पित होती है, उसके बाद सेवा क्षेत्र अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है जिससे औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार का हिस्सा अपने चरम से कम हो जाता है। लेकिन हालिया वर्षों में औद्योगीकरण में कमी कुछ जल्दी ही होती दिखायी दे रही है, अर्थात गरीब देश औद्योगीकरण के अपने वर्तमान चरम स्तर पर होते हुए, औद्योगीकरण और आय के कम स्तरों पर ही पहुंच रहे हैं (रोड्रिक 2014; अमिरापु और सुब्रह्मण्यन 2015)।

अब भारत की क्या बात करें? औद्योगीकरण कम होने की प्रक्रिया विशेष रूप से भारत में तीन कारणों से खास है। हमारे सामने बढ़ती आबादी का विकराल रूप है जो हर महीने तंत्र में लाखों युवाओं को रोजगार के अवसर ढूंढने के लिये झोंक रहा है। चीन में बढ़ती श्रम लागत, कम कौशल वाले देशों जैसे भारत के लिए निवेश के प्रतिस्थापन गंतव्य के रूप में अवसर पैदा करती है। और सत्ता में आने वाली नई सरकार विनिर्माण सफलता के रूप में गुजरात की छवि भारत में दोहराने की संभावना तलाश रही है।

लेकिन गंभीर तथ्य यह भी है कि भारत में औद्योगीकरण कम हो रहा है। वस्तुत: भारत में औद्योगीकरण कम होने की प्रक्रिया को ऐसा कहना भारतीय अनुभव को गरिमा प्रदान करने के समान है, जिसे यदि सही कहें तो यह समयपूर्व औद्योगीकरण का कम होना है क्योंकि भारत पहले ही पर्याप्त औद्योगीकृत नहीं हुआ था।

इस मुद्दे पर बात करने से पहले चित्र 7.2 को देखते हैं जिसमें विनिर्माण प्रेरित विकास करने वाले दक्षिण कोरिया में समय-समय पर कुल रोजगार में विनिर्माण के क्षेत्र का हिस्सा दिखाया गया है। वर्ष 2005 पीपीपी डॉलर में दक्षिण कोरिया का स.घ.उ. भी कई वर्षों की श्रृंखला के साथ दिखाया गया है। इस चित्र में विशिष्ट आकार दिखाया गया है: विनिर्माण में रोजगार का हिस्सा लगभग 5 प्रतिशत के बहुत कम स्तर पर शुरू होता है और समय बीतने पर लगभग 30 प्रतिशत तक पहुंचने पर स.घ.उ. के काफी ऊंचे स्तर पर पहुंचने के बाद गिरना शुरू हो जाता है।

इसके विपरीत, चित्र 7.3 में भारतीय अनुभव दर्शाया गया है। इस चित्र में समय-समय पर भारत के कुल उत्पादन और रोजगार में पंजीकृत विनिर्माण का हिस्सा दर्शाया गया है। (उसी अक्ष पर जिस पर कोरिया का आरेख आधारित है)। सामान्य रुझान स्थिर हैं जिसके साथ पिछले कुछ वर्षों में, जिनके संबंध में आंकड़े उपलब्ध हैं, गिरावट का रुख देखा जा रहा है। दूसरे शब्दों में, स्पष्टरूप से उल्टा यू आकार, जो क्रॉस-सैक्शन और कोरिया की विशेषता है, भारत के मामले में विशेष रूप से गायब है।

चित्र 7.2: 1960-2010 के समय से कुल रोजगार में विनिर्माण का हिस्सा: दक्षिण कोरिया (2005 में पीपीपी प्रति व्यक्ति स.घ.उ. चुनिंदा वर्षों के लिए दर्शाता है।)

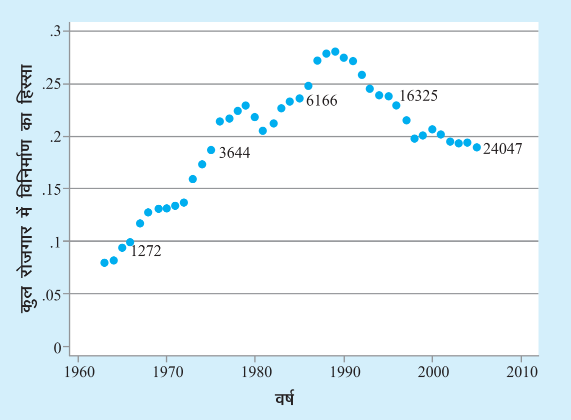

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

चित्र 7.3: 1980-2010 के समय से कुल उत्पादन और रोजगार में पंजीकृत विनिर्माण का हिस्सा अखिल भारत

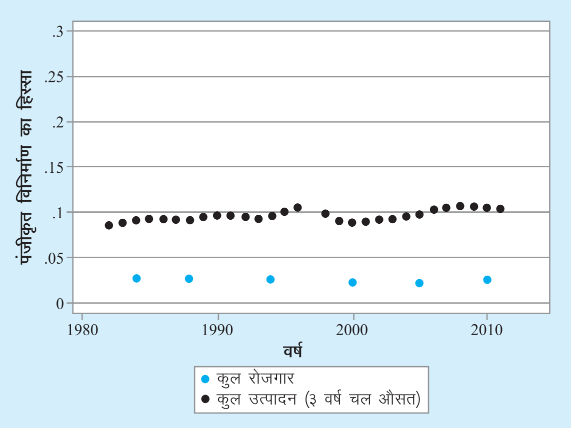

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

लेकिन भारतीय राज्यों में प्रतिरूप विकास क्या हुआ है? सारण 7.2क और 7.2ख में वह वर्ष जिसमें पंजीकृत निर्माण की हिस्सेदारी अपने चरम पर पहुंची (पहले मूल्यवर्द्धन और बाद में रोजगार संदर्भ में), पंजीकृत विनिर्माण की चरम हिस्सेदारी (मूल्यवर्द्धन और रोजगार संदर्भ में) और चरम स्तर पर पंजीकृत निर्माण से जुड़े प्रतिव्यक्ति स.घ.उ. को दिखाया गया है।

इन सारणियों से कुछ बातें सामने आती हैं। गुजरात एकमात्र ऐसा राज्य है जिसमें स.घ.उ. के हिस्से के रूप में पंजीकृत विनिर्माण 20 प्रतिशत से अधिक हो गया और वह पूर्वी एशिया में प्रमुख विनिर्माण सफलता वाले देशों द्वारा हासिल स्तरों के कुछ-कुछ करीब पहुंच गया। यहां तक कि महाराष्ट्र और तमिलनाडु में भी शीर्ष पर विनिर्माण का स्तर राज्य के स.घ.उ. का केवल लगभग 18-19 प्रतिशत ही था। रोजगार के संदर्भ में शीर्ष हिस्सेदारी और भी मामूली है: किसी भी बड़े भारतीय राज्य में पिछले तीस वर्षों में पंजीकृत विनिर्माण से 6.2 प्रतिशत से अधिक रोजगार प्राप्त नहीं किया गया है और कई प्रमुख राज्य इससे आधे से भी कम पर ही रह गये। यहां तक कि गुजरात में भी पंजीकृत विनिर्माण में रोजगार कुल रोजगार का लगभग केवल 5 प्रतिशत ही रहा है, जबकि 1984 और 2010 के बीच पंजीकृत विनिर्माण के रोजगार की वार्षिक वृद्धि 1.8 प्रतिशत रही है (इस अवधि में कुल रोजगार की वृद्धि दर 2.4 प्रतिशत से कहीं कम)।

दूसरे, लगभग सभी राज्यों में (हिमाचल प्रदेश और गुजरात को छोड़कर), मूल्यवर्द्धन के हिस्से के रूप में पंजीकृत विनिर्माण में अब गिरावट हो रही है और अधिकतर राज्यों में ऐसा बहुत

सारणी 7.2क : भारतीय राज्यों में समय पूर्व औद्योगीकरण का कम होना (मूल्यवर्धन के अनुसार)

राज्य	वह वर्ष जिसमें पंजीकृत विनिर्माण में मूल्यवर्धन शीर्ष पर पहुंचा	शीर्ष मूल्यवर्धन में पंजीकृत विनिर्माण का हिस्सा (प्रतिशत)	शीर्ष प्रतिव्यक्ति एनएसडीपी (2005 भारतीय रुपए)	शीर्ष प्रतिव्यक्ति जीएसडीपी (2005 अमरीकी डॉलर पीपीपी)
गुजरात	2011	22.7	52,291	5,357
महाराष्ट्र	1986	18.9	15,864	1,400
तमिलनाडु	1990	18.1	15,454	1,417
हरियाणा	2003	17.3	32,869	3,309
हिमाचल प्रदेश	2011	16.4	46,207	4,733
कर्नाटक	2008	14.7	34,752	3,523
बिहार	1999	13.6	9,215	905
मध्य प्रदेश	2008	12.5	18,707	1,897
पश्चिम बंगाल	1982	12.3	9,348	909
ओडिशा	2009	12.0	22,779	2,353
समग्र भारत	2008	10.7	30,483	3,091
पंजाब	1995	10.5	25,995	2,506
केरल	1989	10.3	14,418	1,322
आंध्र प्रदेश	1996	10.0	16,904	1,641
उत्तर प्रदेश	1996	10.0	11,679	1,134
असम	1987	10.0	12,904	1,164
दिल्ली	1994	8.5	39,138	3,742
राजस्थान	2001	8.3	15,816	1,522

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

सारणी 7.2ख : भारतीय राज्यों में समय पूर्व औद्योगीकरण का कम होना (रोजगार के अनुसार)

राज्य	वह वर्ष जिसमें पंजीकृत विनिर्माण में मूल्यवर्धन शीर्ष पर पहुंचा	शीर्ष मूल्यवर्धन में पंजीकृत विनिर्माण का हिस्सा (प्रतिशत)	शीर्ष प्रतिव्यक्ति एनएसडीपी (2005 भारतीय रुपए)	शीर्ष प्रतिव्यक्ति जीएसडीपी (2005 अमरीकी डॉलर पीपीपी)
तमिलनाडु	2010	6.2	44,033	4,633
दिल्ली	1988	6.1	31,531	2,989
हरियाणा	2010	6.1	54,861	5,773
पंजाब	2010	5.4	44,611	4,694
गुजरात	1984	5.4	15,167	1,343
महाराष्ट्र	1984	4.8	15,212	1,347
पश्चिम बंगाल	1984	4.7	10,371	919
हिमाचल प्रदेश	2010	3.8	42,998	4,524
केरल	1994	3.3	18,926	1,809
कर्नाटक	2010	3.3	36,214	3,811
आंध्र प्रदेश	2010	2.8	36,228	3,812
समग्र भारत	1984	2.7	11,800	1,045
असम	1984	2.5	13,238	1,172
उत्तर प्रदेश	1988	1.6	9,372	888
बिहार	1988	1.5	4,768	452
राजस्थान	2010	1.4	23,908	2,516
मध्य प्रदेश	1994	1.4	13,191	1,261
ओडिशा	2010	1.4	22,677	2,386

स्रोत : **अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)**

समय से हो रहा है। अनेक राज्यों के उत्पादन में विनिर्माण की शीर्ष हिस्सेदारी 1990 के दशक में रही (आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु) और यहां तक कि 1980 के दशक में भी रही (महाराष्ट्र)। दिलचस्प बात यह है कि रोजगार में शीर्ष हिस्सेदारी कुछ अलग रास्ता ही अपना रही है जिसमें अधिकतर राज्यों में कम स्पष्ट गिरावट देखी गयी है। फिर भी, अधिकतर राज्यों में समय बीतने पर रोजगार की हिस्सेदारी में सामान्य वृद्धि नहीं देखी गई है (एकमात्र अपवाद है हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु, हरियाणा और संभवतः कर्नाटक)। अनेक राज्य, जहां वर्ष 2010 में शीर्ष वर्ष देखा गया है (जैसे कि आंध्र प्रदेश, राजस्थान और ओडिशा) में ऐसी रोजगार हिस्सेदारी देखी जा रही है जो अधिकांशतः सपाट है, अर्थात् न तो सापेक्ष वृद्धि और न ही गिरावट देखी गयी है।

तीसरे, और संभवतः सबसे गंभीर सच्चाई है कि विनिर्माण अपेक्षाकृत गरीब राज्यों में भी कम हो रहा है: ऐसे राज्य जो प्रभावी रूप से कभी औद्योगीकृत नहीं हुए (पश्चिम बंगाल और बिहार), वहां भी औद्योगीकरण कम होने की प्रक्रिया शुरू हो गई है।

कुछ तुलनाएं वाकई ज्ञानवर्धक हैं। भारत के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश की ही बात करें। यह राज्य लगभग 1200 डॉलर के प्रतिव्यक्ति राज्य घरेलू उत्पाद (2005 क्रयशक्ति क्षमता डॉलर में मापित) के स्तर पर 1996 में स.घ.उ. के 10 प्रतिशत पर उत्पादन में विनिर्माण की हिस्सेदारी पर पहुंच गया था। इंडोनेशिया जैसे देश ने 5800 डॉलर के प्रतिव्यक्ति स.घ.उ. के स्तर पर 29 प्रतिशत का शीर्ष विनिर्माण हिस्सा हासिल किया था। ब्राजील ने 7100 डॉलर के प्रतिव्यक्ति स.घ.उ. के स्तर पर 31 प्रतिशत का शीर्ष विनिर्माण हिस्सा हासिल किया था। इसलिए उत्तर प्रदेश के औद्योगीकरण में उत्तर प्रदेश का अधिकतम हिस्सा ब्राजील और इंडोनेशिया के मुकाबले लगभग एक तिहाई था; और यह गिरावट इन देशों के आय स्तरों के 15-20 प्रतिशत स्तर पर शुरू हुई।

इस तरह, हमने यह दिखाया है कि कुछ ही राज्यों को छोड़कर सभी राज्यों में भारतीय विनिर्माण क्षेत्र में निश्चित रूप से विकास नहीं हो रहा है और संभवत: यह संकुचित भी हो रहा है। अपेक्षा 2 ख और 3 को विनिर्माण क्षेत्र द्वारा पूरा न किया जाने का एक संभावित परिणाम चीन के विपरीत यह होगा कि समग्र प्रतिव्यक्ति स.घ.उ. में भारत के राज्यों के बीच समाभिरूपता का कोई प्रमाण नहीं है। चीनी प्रांतों के संदर्भ में ऐसा हुआ है कि प्रतिव्यक्ति स.घ.उ. का आरंभिक स्तर जितना कम रहा है, उसके बाद का विकास उतना ही तीव्र हुआ है, जिससे गरीब प्रांत समृद्ध प्रांतों के बराबरी पर आ जाते हैं। भारत में ऐसी कोई समाभिरूपता नहीं हुई है क्योंकि गरीब राज्यों द्वारा औसतन समृद्ध राज्यों के मुकाबले तीव्र गति से विकास करने की संभावना नहीं है (अमिरापु और सुब्रह्मण्यम 2014)। इसलिए भारत में क्षेत्रीय असमानताएं बनी हुई हैं।

यदि विनिर्माण क्षेत्र में उत्पादकता ने घरेलू समाभिरूपता दिखाते हुए संसाधनों को आकृष्ट किया होता तो यह क्षेत्र गरीब राज्यों में भी विकसित होता जिससे इन राज्यों में आय के समग्र स्तरों में बढ़ोतरी हुई होती तथा भारत में आय वितरण में व्याप्त अंतर को कम करने में मदद मिलती। इसकी बजाय प्रतीत यह होता है कि विनिर्माण क्षेत्र प्रगति का अग्रदूत बनने में असफल रहा है।

इस बात के कई स्पष्टीकरण दिये जा सकते हैं कि क्यों विनिर्माण क्षेत्र भारत में विकास का प्रेरक नहीं बन पाया है। इन तथ्यों को चार मुख्य श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है: श्रम बाजार में व्याप्त विकृतियां; पूंजी बाजार में व्याप्त विकृतियां; भूमि बाजार में व्याप्त विकृतियां; और भारत की प्राकृतिक तुलनात्मक लाभ तथा कौशल प्रधान कार्यकलापों से हटकर अनुपयुक्त विशेषज्ञता। अमिरापु और सुब्रह्मण्यम (2015) अंतिम स्पष्टीकरण के समर्थन में कुछ प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

7.3.5 तुलनात्मक लाभ के साथ अनुरूपण

जैसा कि पहले तर्क दिया गया है किसी क्षेत्र द्वारा परिवर्तन की संभावनाएं पैदा करने के लिए इसमें न सिर्फ उत्पादकता के उच्च स्तर होने चाहिए बल्कि इसमें शेष अर्थव्यवस्था से लेकर संसाधन खपाने की भी शक्ति होनी चाहिए। लेकिन ऐसा करने के लिए क्षेत्र द्वारा निविष्टियों का उपयोग देश के

सारणी 7.3 : भारतीय अर्थव्यवस्था में उप क्षेत्रों के अनुसार औसत कौशल का स्तर (एनएसएसओ 2004-5)

क्षेत्र और उपक्षेत्र	कम से कम प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर्मचारियों का हिस्सेदारी	कम से कम माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर्मचारियों का हिस्सेदारी
कृषि, वानिकी और मात्स्यिकी	0.445	0.139
खनन	0.501	0.221
समग्र विनिर्माण	0.628	0.248
पंजीकृत विनिर्माण (10 कामगारों से कारखाने में कामगार)	0.768	0.432
समग्र सेवाएं	0.778	0.478
परिवहन और संचार	0.715	0.330
थोक और खुदरा व्यापार	0.721	0.346
वित्तीय सेवाएं और बीमा	0.976	0.836
स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं	0.935	0.775
लोक प्रशासन और रक्षा	0.897	0.665
शिक्षा	0.963	0.888
स्वास्थ्य और समाज सेवा	0.924	0.767
बिजली, गैस और जल	0.856	0.558
निर्माण	0.518	0.144

स्रोत : **अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)**

तुलनात्मक लाभ के अनुरूप होना चाहिए। इससे उत्पादन के प्रचुर कारक (आम तौर पर अकुशल श्रमबल) को उत्पादकता वृद्धि और समाभिरूपता से लाभ तो होगा ही, और ऐसा करने में विकास न सिर्फ शीघ्र और सतत् होगा बल्कि समावेशी भी होगा। दूसरे शब्दों में, गतिशील क्षेत्र कम से कम आरंभ में अपेक्षाकृत अकुशल श्रम प्रधान होना चाहिए। क्या यह भारतीय विनिर्माण के क्षेत्र के बारे में सच है? कोछड़ और अन्य (2006) ने पाया है कि भारतीय विनिर्माण क्षेत्र असामान्य तौर पर, कुशल श्रम प्रधान है। तुलनात्मक लाभ के साथ गतिशीलता को अनुरूप बनाने का आकलन करने का एक और साधारण पैमाना है-अन्य क्षेत्रों के संबंध में विनिर्माण क्षेत्र की सापेक्ष कौशल सघनता। सारणी 7.3 में कुछ आकड़े दिये गये हैं। 2004/5 के एनएसएसओ के रोजगार और बेरोजगारी सर्वेक्षण से भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्रों (और उपक्षेत्रों) के संबंध में कम से कम प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा वाले कर्मचारियों की हिस्सेदारी आकलित की गई है।

यह पाया गया है कि पंजीकृत निर्माण एक ऐसा क्षेत्र है जो अपेक्षाकृत कुशल श्रम प्रधान है। जैसा कि सारणी 7.3 में दिखाया गया है कम से कम माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कामगारों का हिस्सा कृषि, खनन और अपंजीकृत निर्माण की तुलना में पंजीकृत के विनिर्माण में काफी अधिक है और सेवा के अनेक उपक्षेत्रों में भी अधिक है। इस बात पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए। इस क्षेत्र में उच्च श्रम उत्पादकता (सारणी 7.1) कम से कम आंशिक रूप से कार्यबल के बेहतर कौशल का परिणाम है। तथापि इससे यह पता चलता है कि पंजीकृत विनिर्माण अपेक्षा संख्या 4 को पूरा नहीं करता। इस क्षेत्र की कौशल गहनता भारत के तुलनात्मक लाभ की तर्ज पर नहीं है।

7.4 सेवा क्षेत्र का स्कोर कार्ड

यह स्कोर कार्ड विश्लेषण भारत के सेवा क्षेत्र के लिए भी दोहराया जा सकता है। लेकिन ऐसा करने से पहले यह स्वीकारना महत्वपूर्ण होगा कि समग्र रूप में सेवाएं विश्लेषण की उपयोगी श्रेणी नहीं होती क्योंकि इसमें आर्थिक गतिविधि यों के अलग-अलग और विभिन्न किस्म के रूप शामिल होते हैं जिनमें सरकारी सेवाएं और निर्माण जो गैर विक्रेय होती हैं, से लेकर वित्त और करोबारी सेवाएं जो मुख्यत: विक्रेय होती हैं तथा कुछ ऐसी गतिविधियां जो श्रम प्रधान होती हैं तथा दूर संचार जैसी अन्य सेवाएं भी शामिल होती हैं जो अत्यधिक पूंजी और कुशल श्रम प्रधान होती हैं। सेवा क्षेत्र के किसी भी सार्थक विश्लेषण में विभिन्न सेवा उपक्षेत्रों के बीच अंतर अवश्य किया जाना चाहिए- हालांकि पृथक्करण की सीमा निश्चित रूप से आंकड़ों की उपलब्धता से निर्धारित की जाएगी।

हम सारणी 7.4 में दिखाये गये छ: विभिन्न उप क्षेत्रों का अध्ययन कर रहे हैं और पंजीकृत विनिर्माण के लिए ऊपर किये गये विश्लेषण को दोहराएंगे।

सारणी 7.4: आर्थिक उप-क्षेत्रों की रोजगार हिस्सेदारी में वृद्धि, 1984-2010

	उत्पादकता का आरंभिक स्तर 1984	रोजगारी की हिस्सेदारी		वार्षिक वृद्धि (प्रतिशत)
	1984	1984	2010	1984-2010
पूंजीकृत विनिर्माण	117,984	0.027	0.026	-0.2
समग्र सेवाएं	61,978	0.201	0.219	0.3
व्यापार, होटल और रेस्तरां	56,284	0.074	0.093	0.9
परिवहन, भण्डारण और संचार	68,823	0.028	0.038	1.2
वित्तीय सेवाएं और बीमा	198,584	0.006	0.007	0.7
स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं आदि	1,012,017	0.002	0.011	7.1
लोक प्रशासन और रक्षा	41,154	0.030	0.018	-1.9
निर्माण	62,773	0.031	0.080	3.7

स्रोत: अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)

7.4.1 उत्पादकता स्तर

सारणी 7.4 में इन सेवा उप-क्षेत्रों तथा विनिर्माण (पंजीकृत और अपंजीकृत दोनों) के उत्पादकता के स्तर के संबंध में तुलनात्मक आंकड़े दिये गये हैं। पहला बात जो दिखायी देती है, वह सेवाओं में विस्मयकारी विविधता का होना है जिससे पृथक्करण किये जाने का आधार मजबूत बनता है। उदाहरणत: 1984 में, स्थावर संपदा और कारोबारी सेवा क्षेत्र में उत्पादकता का स्तर लोक प्रशासन (मूलत: सरकारी) से 25 गुना अधिक था और खुदरा व्यापार की तुलना में लगभग 20 गुना अधिक था। 6 सेवा उप-क्षेत्रों में से वित्तीय सेवाओं और कारोबारी सेवा के दो क्षेत्रों में उत्पादकता के स्तर पंजीकृत विनिर्माण से अधिक रहे हैं।

7.4.2 घरेलू समाभिरूपता

इस बात की जांच की जा रही है कि क्या पिछले तीन दशकों में भारत में सेवा उप-क्षेत्रों में बिना शर्त समाभिरूपता व्याप्त थी। उल्लेखनीय है कि लगभग सभी सेवा उप-क्षेत्रों में और अन्य समय अवधियों (यहां सूचित नहीं किया गया है) में बिना शर्त समाभिरूपता पायी गयी है। वस्तुत: अधिकतर सेवा उप-क्षेत्रों में घरेलू समाभिरूपता की रफ्तार पंजीकृत विनिर्माण (लगभग 2 प्रतिशत) के समान ही रही है और कुछ मामलों में काफी अधिक भी रही है। उदाहरणत:, स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं, पंजीकृत विनिर्माण की समाभिरूपता के मुकाबले दो गुनी दर पर समाभिरूप हुई हैं।

7.4.3 अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता

यूनिडो के आंकड़ों को इस्तेमाल करके रोड्रिक (2013) यह प्रमाणित करते हैं कि संगठित विनिर्माण क्षेत्र के उद्योगों ने श्रम संबंधी उत्पादकता में लगातार वैश्विक समाभिरूपता प्रदर्शित की, हालांकि भारतीय विनिर्माण उद्योग औसत के मुकाबले बहुत धीमी रफ्तार से वैश्विक फ्रंटियर पर पहुंच पाये, वह भी मुश्किल से। अब सेवा उप-क्षेत्रों का क्या हुआ?

विश्व बैंक के वैश्विक विकास संकेतकों से प्राप्त क्षेत्रगत उत्पादकता के आंकड़ों को इस्तेमाल करते हुए, गृनी और ओ कॉनेल यह तर्क देते हैं कि समग्र तौर पर सेवाओं ने विनिर्माण के समान ही और कहीं-कहीं अधिक समाभिरूपता दिखायी है- कम से कम हालिया समय में तो दिखायी ही है (लगभग 1990 से 2005)। यह एक दिलचस्प निष्कर्ष है, लेकिन विशेषरूप से इस विश्लेषण के लिए सेवाओं का पृथक्करण किया जाना चाहिए क्योंकि क्षेत्रगत विशेषताओं जैसे कि विक्रेयता में बड़े अंतर होने के कारण उप-क्षेत्रों के अनुसार समाभिरूपता की पद्धति भिन्न हो सकती है।

सारणी 7.5: विभिन्न देशों में सेवा उप-क्षेत्रों में बिना शर्त समाभिरूपता (1990-2005), परावर्तन में आरम्भिक उत्पादकता के लॉग के प्रति उत्पादकता वृद्धि शामिल है

	(1)	(2)	(3)	(4)	(6)
आरंभिक उत्पादकता का लॉग	**व्यापार, होटल और रेस्तरां**	**परिवहन भण्डारण और और संचार**	**वित्त, बीमा और स्थावर संपदा**	**सामुदायिक, सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं**	**निर्माण**
व्यापार, होटल और रेस्तरां	-0.007 (0.005)				
परिवहन भण्डारण और संचार		-0.00 (0.008)			
वित्त, बीमा और स्थावर संपदा			-0.031*** ((0.007)		
सामुदायिक, सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं				-0.030*** ((0.008)	
निर्माण					-0.026*** (0.008)
स्थिर	0.061 (0.053)	0.105 (0.083)	0.325*** ((0.076)	0.315** (0.094)	0.269*** (0.085)
प्रेक्षण	27	27	27	9	27

कोष्ठकों में मानक चूक दी गई है।

* $p < 0.10$, ** $p < 0.05$, *** $p < 0.01$. **स्रोत: अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)।**

सारणी 7.5 में ग्रोनिनगन ग्रोथ एंड डेवलपमेंट सेंटर (जीजीडीसी) से प्राप्त आंकड़ों को इस्तेमाल करते हुए 1990 से 2005 की अवधि के दौरान सेवा उप-क्षेत्रों द्वारा अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता के परिणामों की सूचना दी गई है। हालांकि आंकड़ों की उपलब्धता के कारण इस विश्लेषण में देशों की संख्या बहुत सीमित है[7], फिर भी यह परिणाम बहुत दिलचस्प हैं। हम यह पाते हैं कि कुछ सेवा उप-क्षेत्रों (वित्त, बीमा और स्थावर संपदा; सामुदायिक, सामाजिक वैयक्तिक सेवाएं; और निर्माण) में जबर्दस्त अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता देखी गई है जबकि अन्य उप-क्षेत्रों (व्यापार, होटल और रेस्तरां; परिवहन, भंडारण और संचार में ऐसा नहीं देखा गया)। आश्चर्य तो इस बात का है कि समाभिरूपता दिखाने वाले कतिपय क्षेत्रों में ऊपरी तौर पर, निर्माण जैसे कुछ गैर-कारोबारी क्षेत्र भी शामिल हैं।

इसलिए अब तक के निष्कर्ष यही बताते हैं कि सब नहीं-लेकिन अनेक सेवा उप-क्षेत्र उच्च उत्पादकता वृद्धि, घरेलू समाभिरूपता और अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता की अपेक्षाएं पूरी करते हैं।

7.4.4 सेवाओं का विस्तार?

यह प्रमाण प्रस्तुत किया जा चुका है कि भारत में विनिर्माण से प्राप्त रोजगार और उत्पादन में उसकी हिस्सेदारी में पिछले तीस वर्षों में न के बराबर परिवर्तन हुआ है। नीचे दी गई सारणियों में भारत में सेवाओं के लिए अनुरूप साक्ष्य-समग्र रूप में और विशेष उप-क्षेत्रों के संबंध में प्रमाण दिए गए हैं।

पंजीकृत निर्माण के विपरीत-समग्र सेवाओं से प्राप्त उत्पादन की हिस्सेदारी में पिछले तीस वर्षों में जबर्दस्त वृद्धि हुई है जो स.घ.उ. के लगभग 35 प्रतिशत से बढ़कर 50 प्रतिशत से अधिक हो गई है। इसके विपरीत, रोजगार में समग्र सेवाओं की हिस्सेदारी में बढ़ोतरी कहीं अधिक साधारण रही है (सारणी 7.6 देखें)। लेकिन पंजीकृत निर्माण की तुलना में स्पष्ट अंतर दिखायी देता है। समग्र सेवाओं में रोजगार वृद्धि पंजीकृत विनिर्माण की तुलना में कहीं अधिक तेजी से बढ़ी और अनेक सेवा उप-क्षेत्रों जैसे परिवहन, स्थावर संपदा और निर्माण में रोजगार वृद्धि में भारी तेजी देखी गई। दूसरे शब्दों में सेवाएं समृद्धि का एक अधिक महत्वपूर्ण स्रोत बनती जा रही हैं और हालांकि इस क्षेत्र में तीव्र रोजगार वृद्धि पैदा नहीं की है, इस क्षेत्र और अनेक सेवा उप-क्षेत्रों ने विनिर्माण की तुलना में अधिक तीव्र रोजगार वृद्धि सृजित की है।

7.4.5 तुलनात्मक लाभ के साथ अनुरूपण?

हमने ऊपर यह तर्क दिया था कि भारत जैसे कम कुशल श्रम प्रधान देश में किसी भी क्षेत्र को इस मुख्य संसाधन को इस्तेमाल करना चाहिए ताकि विकास और संरचनागत परिवर्तन की बड़ी संभावनाएं बन सकें। हमने यह भी देखा कि पंजीकृत विनिर्माण काफी अधिक कुशल श्रम प्रधान क्षेत्र है जिसमें औसत शैक्षिक उपलब्धि काफी अधिक है।

इसी सारणी में यह भी दिखाया गया है कि समग्र तौर पर सेवाएं किसी भी अर्थ में कम कौशल प्रधान नहीं हैं: औसतन, सेवा क्षेत्र में 78 प्रतिशत कामगार कम से कम प्राथमिक शिक्षा प्राप्त हैं (पंजीकृत विनिर्माण में 77 प्रतिशत) और कम से कम 48 प्रतिशत कामगार माध्यमिक शिक्षा प्राप्त हैं (पंजीकृत विनिर्माण में 43 प्रतिशत)। इसके अलावा अनेक सेवा उप-क्षेत्रों जिनमें (1) बैंकिंग और बीमा, (2) स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं, (3) लोक प्रशासन (4) शिक्षा

सारणी 7.6: भारत: सेवाएं बनाम विनिर्माण स्कोर कार्ड

	विशेषता	पंजीकृत विनिर्माण	व्यापार, होटल और रेस्तरां	परिवहन भण्डारण और संचार	वित्तीय सेवाएं और बीमा	स्थावर संपदा और कारोबारी सेवाएं आदि	निर्माण
1.	उच्च उत्पादकता	हां	नहीं	कुछ विशेष नहीं	हां	हां	नहीं
2क.	बिना शर्त घरेलू समाभिरूपता	हां	हां	हां	हां	हां	हां
2ख.	बिना शर्त अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता	हां, लेकिन भारत के लिए नहीं	नहीं	नहीं	हां	हां	हां
3.	समाभिरूप क्षेत्रों द्वारा संसाधनों को खपाते हैं	नहीं	थोड़ा बहुत	थोड़ा बहुत	नहीं	थोड़ा बहुत	हां
4.	कौशल संबंधी रूपरेखा और आधारभूत क्षमता का मेल	कुछ विशेष नहीं	थोड़ा बहुत	थोड़ा बहुत	नहीं	नहीं	हां
5.	विक्रेय और/अथवा दोहराने योग्य	हां	नहीं	थोड़ा बहुत	हां	थोड़ा बहुत	नहीं

स्रोत : अमिरापु और सुब्रह्मण्यन (2015)।

और (5) स्वास्थ्य और सामाजिक सेवाएं शामिल हैं, में पंजीकृत विनिर्माण की तुलना में काफी अधिक शैक्षिक उपलब्धियां हैं (90 प्रतिशत से अधिक कामगार कम से कम प्राथमिक शिक्षा प्राप्त)। इसका अर्थ यह है कि अधिकतर सेवा उप-क्षेत्रों (अधिकांशतः उच्च उत्पादकता, उच्च वृद्धि वाले उप क्षेत्र) में भारत के सबसे प्रचुर संसाधन अर्थात् अकुशल श्रम बल को इस्तेमाल करने की क्षमता बहुत सीमित है। इसी से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सेवाओं से प्राप्त उत्पादन की हिस्सेदारी में इतनी जबर्दस्त वृद्धि होने के बावजूद, सेवाओं से प्राप्त रोजगार की हिस्सेदारी में इतनी साधारण वृद्धि क्यों हुई है।

7.5 स्कोर कार्ड का सारांश और निष्कर्ष

सारणी 7.6 में स्कोर कार्ड का सारांश दिया गया है जिसमें पंजीकृत निर्माण और चुनिंदा उप-क्षेत्रों की तुलना दी गई है। आगे बढ़ने से पहले कुछ महत्वपूर्ण बातें स्पष्ट कर दी जाएं। पहले, हम सेवा क्षेत्रों की तुलना केवल *पंजीकृत* (औपचारिक) विनिर्माण क्षेत्र से ही करेंगे क्योंकि कृषि के अलावा-अपंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के सबसे कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों में से एक है-और इसलिए परिवर्तन की बहुत कम संभावना पेश करता है। इसीलिए, जब भारत में विनिर्माण क्षेत्र की परिवर्तन करने की क्षमता की बात होती है तो खास ध्यान पंजीकृत विनिर्माण पर ही दिया जाना चाहिए।

दूसरे, इस अध्याय का एक और योगदान विनिर्माण और सेवाओं की तुलना के आधार पर परंपरागत अंतर से परे जाकर परिवर्तनकारी क्षेत्रो के बारे में एक नई सोच पेश करना है। हमने आसानी से दिखायी देने वाली बुनियादी विशेषताओं के आधार पर क्षेत्रों की तुलना की है। निश्चित रूप से विनिर्माण और सेवाओं के बीच कुछ कम अंतर ही होंगे जो इस विश्लेषण से छूट गये हैं।

उदाहरणतः हमारे वर्तमान विश्लेषण में उस सीमा पर विचार नहीं किया गया है जिस सीमा तक कतिपय क्षेत्र (जैसे कि पंजीकृत विनिर्माण) अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों से कुछ सीखने की संभावना रखते हैं जो कि महत्वपूर्ण हो सकता है। कुछ अन्य आयाम जो लुप्त हैं, उनमें राजनीतिक आयाम शामिल हैं: डॉनी रोड्रिक यह बताते हैं कि विनिर्माण क्षेत्र एक ऐसा मंच मुहैया करा कर युवा राष्ट्रों के राजनीतिक विकास में अप्रत्यक्ष भूमिका निभा सकता है जिस पर नागरिक ''विनिर्माण कर्ता के स्थल पर'' श्रम और पूंजी के बीच संघर्ष के जरिए लोकतांत्रिक संदर्भ में समझौता करने का अभ्यास करते हैं (रोड्रिक, 2013ख)। हालांकि हमारे विश्लेषण में इन चैनलों को छोड़ दिया गया है, फिर भी हमारा विश्वास है कि वे पहले बतायी गई पांच वांछनीय विशेषताओं की तुलना में दोयम दर्जे की हैं।

यदि तुलना करें तो यह पता चलता है कि कतिपय अन्य सेवा उप-क्षेत्रों के मुकाबले पंजीकृत विनिर्माण क्षेत्र के बारे में कोई बात विशिष्ट या श्रेष्ठ नहीं दिखाई देती। विनिर्माण क्षेत्र की तरह, अनेक सेवा उप-क्षेत्रों में भी उच्च उत्पादकता और घरेलू एवं अंतरराष्ट्रीय समाभिरूपता दोनों ही देखी गई हैं। तथापि, उन में यह कमी भी है कि ये क्षेत्र संसाधन संबंधी अपनी जरूरतों के लिए अत्यधिक कौशल प्रधान हैं जो भारतीय श्रम बल की कौशल क्षमता से मेल नहीं खाता। इसलिए समावेशी अथवा साझे विकास के संबंध में उनकी संभावना सीमित रहेगी-और वस्तुतः पहले देखी गई विस्तार की कमी के चलते ऐसा हो भी रहा है (यह बात स्कोर कार्ड में दर्ज की गई है।

नीचे दी गई सारणी में सबसे अलग दिखने वाला एक क्षेत्र है निर्माणः इसमें दोनों प्रकार की समाभिरूपता देखी गई है, इसमें शिक्षा के उच्च स्तरों की जरूरत नहीं है और पिछले तीन दशकों में इसने संसाधनों के उपयोग में उल्लेखनीय वृद्धि की है। तथापि, यह क्षेत्र विक्रेय नहीं है और हर हाल में कम उत्पादकता वाला है, इसलिए इस क्षेत्र में श्रम संसाधनों का अंतरण करने से समग्र कल्याण में कोई विशेष सुधार नहीं होता है।

इसलिए, कुछ हद तक भारत के लिए उपलब्ध विकल्प विनिर्माण और सेवाओं की तुलना करना नहीं है बल्कि तुलनात्मक लाभ प्राप्त क्षेत्र (अकुशल श्रम प्रधान) के साथ-साथ तुलनात्मक लाभ प्राप्त (कुशल श्रम प्रधान) क्षेत्र के विकास में निहित है। यह एक सकारात्मक और नीतिगत प्रश्न है।

हालांकि भारत के विकास की श्रम प्रधान पद्धति निश्चित रूप से महंगी पड़ी है, फिर भी इसके सकारात्मक लाभ हैं। माइरन वीनर, और अन्य, ने आजादी के बाद शिक्षा संबंधी जरूरतें पूरी करने में भारत सरकार के खराब निष्पादन की ओर इशारा किया है जो विशेषकर महिलाओं की साक्षरता दर में बहुत धीमे सुधार के रूप में प्रतिबिंबित हुआ है। जहां सरकार की ओर से शैक्षिक सेवाओं की आपूर्ति अपर्याप्त रही है, वहीं यह प्रश्न उठता है कि शिक्षा के लिए अधिक मांग क्यों नहीं उठी और इस तरह इस मांग को पूरा करने के लिए सरकार पर अधिक दबाव क्यों नहीं डाला गया।

इस प्रश्न का एक जवाब यह है कि साक्षरता और बुनियादी शिक्षा पर निजी क्षेत्र द्वारा किये गये निवेश पर प्रतिलाभ अवश्य कम रहे होंगे। अब यह प्रमाण मिला है कि आर्थिक विकास को प्रेरित करने वाले अवसरों में वृद्धि होने से इन प्रतिलाभों में भी बढ़ोतरी होती है जिसके परिणामस्वरूप सरकारी और निजी दोनों तरह की शैक्षिक सेवाओं की मांग बढ़ती है और इस तरह शैक्षिक परिणाम भी सुधरते हैं (मुंशी एंड रोजन्ज़्वाइग, 2003)। इससे शिक्षा सेवाओं की आपूर्ति पर दबाव पड़ा है। अच्छे स्कूल बनाने में सरकार की असफलता सब जानते हैं, लेकिन विकास ने इस तस्वीर में नाटकीय परिवर्तन किया है। इसकी मुख्य वजह यह है कि विकास के कारण शिक्षा से प्राप्त होने वाले प्रतिलाभ बढ़ गए हैं और इसलिए शिक्षा की मांग भी बढ़ गई है।

अर्थशास्त्री कार्तिक मुरलीधरन और माइकल क्रैमर के कार्य से यह साक्ष्य मिलता है कि ग्रामीण भारत में प्राइवेट स्कूलों की बाढ़ आ गई है (अनेक स्कूल, ''इंग्लिश मीडियम'' वाला होने का प्रचार करते हैं)। इसकी वजह सरकारी स्कूलों में अध्यापकों का गैर हाज़िर होना है। हमें कुछ शहरों में कौशल सृजन के लिए कंपनियों द्वारा प्रशिक्षण केंद्र निर्मित करने की बात भी सुनाई देती है (जैसे कि मैसूर में इनफोसिस इंस्टीट्यूट) क्योंकि उच्च शिक्षा की संस्थाएं बिल्कुल अपर्याप्त हैं। मानव पूंजी में यह बाहरी वृद्धि तुलनात्मक लाभ प्राप्त कुशल श्रम-बल प्रधान विकास मॉडल को प्रति संतुलित करने का एक लाभ हो सकता है।

नीतिगत प्रश्न इस प्रकार है। *जहां तक सरकार द्वारा विकास की पद्धति को रूप-आकार देने पर नियंत्रण रखने का संबंध है, क्या उसे अकुशल विनिर्माण क्षेत्र का पुनरुद्धार करने का प्रयास करना चाहिए अथवा क्या इसे स्वीकार कर लेना चाहिए कि विकास की कुशल श्रम प्रधान पद्धति को संपोषित करने के लिए जमीन तैयार करना कठिन है?* पहली बात को हासिल करना इतिहास के विरुद्ध जाने के बराबर होगा क्योंकि औद्योगीकरण कम होने की प्रक्रिया को उलटने के उदाहरण बहुत ज्यादा नहीं हैं। भारत में बहुत परिवर्तन किए जाने होंगे- अकुशल श्रम प्रधान विनिर्माण क्षेत्र को सहारा देने वाली अवसंरचना और संभारिकी/कनेक्टिविटी निर्मित करने से लेकर अनेकानेक कानूनों और विनियमों में सुधार करना-अथवा उनके प्रवर्त्तन के संदर्भ में भ्रष्टाचार का समाधान करना-जिनसे औपचारिक क्षेत्र में अकुशल श्रम को नियुक्त करने और किफायत बरतने में कठिनाई होती है।

दूसरी ओर, कुशल श्रम प्रधान पद्धति को बनाये रखने के लिए शिक्षा (और कौशल विकास) पर अधिक ध्यान दिए जाने की जरूरत होगी ताकि समय के साथ-साथ बदलती विकास पद्धति दूसरी कमियों से ग्रस्त न हो जाये। इस श्रम प्रधान मॉडल को यह कीमत चुकानी होगी कि एक या दो पीढ़ियां जो इस समय अकुशल हैं, आगे बढ़ने के अवसरों से वंचित हो कर पीछे ही रह जाएंगी। लेकिन कौशल विकास पर जोर देने से कम से कम यह सुनिश्चित हो जाएगा कि भावी पीढ़ियां गंवा दिये गये अवसरों से लाभ उठा सकें।

कुछ हद तक, भारत के सामने इस समय यह चुनने का विकल्प है कि वह इसे असीमित श्रम बल वाली लुईसियन अर्थव्यवस्था कैसे बनाये। भारत यह सुनिश्चित करने के लिए या तो ऐसी स्थितियां सृजित कर सकता है जिससे इसकी अकुशल श्रम बल की असीमित आपूर्ति का उपयोग कर लिया जाए अथवा यह सुनिश्चित कर सकता है कि कुशल श्रम बल की लोचहीन मौजूदा आपूर्ति को अधिक लचीला बनाया जाए। ये दोनों ही बड़ी चुनौतियां हैं।

हालांकि यह विश्लेषण यह इंगित करता है कि जहां अत्यधिक महत्व प्राप्त कर चुका ''मेक इन इंडिया'' महत्वपूर्ण लक्ष्य है, वहीं प्रधानमंत्री का ''स्किलिंग इंडिया'' भी कम महत्वपूर्ण नहीं है और शायद इस पर उतना ही ध्यान दिया जाना चाहिए। यदि ''मेक इन इंडिया'' सफल हो जाता है तो यह अकुशल श्रम बल के संदर्भ में भारत को लुईसियन अर्थव्यवस्था बना देगा। लेकिन, ''स्किलिंग इंडिया'' में भारत को अधिक कुशल श्रम बल के संदर्भ में लुईसियन अर्थव्यवस्था बनाने की क्षमता है। भारत के आर्थिक विकास का भावी पथ इन दोनों पर निर्भर करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

Amirapu, Amrit and Michael Gechter (2014). "Indian Labor Regulations and the Cost of Corruption: Evidence from the Firm Size Distribution," *Working Paper*.

Amirapu, Amrit and Arvind Subramanian (2015). "Manufacturing or Services? An Indian Illustration of a Development Dilemma," *Working Paper*.

Besley, Timothy and Robin Burgess (2004). "Can Labor Regulation Hinder Economic Performance? Evidence from India," *The Quarterly Journal of Economics*, 119 (1), 91-134.

Bollard, Albert, Peter Klenow and Gunjam Sharma, (2013). "India's Mysterious Manufacturing Miracle," *Review of Economic Dynamics*, 16(1), 59-85.

Blanchard, Emily and Will Olney (2013). "The Composition of Exports and Human Capital Acquisition," *Working Paper*.

Duranton, Gilles, Ejaz Ghani, Arti Goswami and William Kerr (2014). "The Misallocation of Land and Other Factors of Production in India," *Working Paper*.

Ghani, Ejaz, William Kerr, and Alex Segura (2014). "Informal Tradables and the Employment Growth of Indian Manufacturing," *World Bank Working Paper*.

Ghani, Ejaz and Stephen O'Connell (2014). "Can Services Be A Growth Escalator in Low Income Countries?," *Working Paper*.

Hausmann, Hwang, and Rodrik (2007). "What you export matters," *Journal of Economic Growth* 12:125.

Herrendorf, Berthold, Richard Rogerson and Ákos Valentinyi (2014). "Growth and Structural Transformation," in *Handbook of Economic Growth*, Vol. 2B, ed. by P. Aghion and S. Durlauf. Amsterdam: Elsevier, 855–941.

Johnson, Ostry and Subramanian (2010). "Prospects for Sustained Growth in Africa: Benchmarking the Constraints," *IMF Staff Papers*. 57 (1), 119-71.

Krugman, Paul (1994). 'The Fall and Rise of Development Economics', pp. 39-58. In *Rethinking the Development Experience. Essays Provoked by the Work of Albert O. Hirschman*, ed. by L. Rodwin and D. Schon. Washington, D.C.: The Brookings Institution.

Levinsohn, James and Amil Petrin (2003). "Estimating Production Functions Using Inputs to Control for Unobservables," *Review of Economic Studies*. 70 (2), 317–342.

McMillan, M. and D. Rodrik (2011). "Globalization, Structural Change, and Productivity Growth", *NBER Working Paper* 17143, National Bureau of Economic Research.

Munshi, Kaivan., and Mark Rosenzweig (2003). "Traditional Institutions Meet the Modern World: Caste, Gender and Schooling Choice in a Globalizing Economy," *American Economic Review*, 96 (4), 1225-1252.

Muralidharan, Karthik, and Michael Kremer (2009). "Public and Private Schools in Rural India," in *School Choice International: Exploring Public-Private Partnerships*, ed. by R. Chakrakbarti and P. Peterson. Cambridge, MA: MIT Press.

Rodrik, Dani (2013). "Unconditional Convergence in Manufacturing," *The Quarterly Journal of Economics*, 128 (1), 165-204.

Rodrik, Dani (2014). "The Perils of Premature Deindustrialization," Retrieved from http://www.project-syndicate.org/commentary/dani-rodrikdeveloping-economies--missing-